इकाई 8 संज्ञानात्मक विकास

इकाई की रूपरेखा

8.1 प्रस्तावना

8.2 उद्देष्य

8.3 संज्ञानात्मक विकास का प्रत्यय

8.4 संज्ञानात्मक विकास का अध्ययन अध्यापकों के लिए क्यों आवष्यक है?

8.5 संज्ञानात्मक विकास को समझने के लिए सिद्धांत एवं परिप्रेक्ष्य

8.5.1 पियाजे का संज्ञानात्मक विकास : संज्ञानात्मक विकास की केन्द्रीय प्रक्रियाएँ: संज्ञानात्मक विकास की अवस्थाएँ; विद्यालय एवं पियाजे का सिद्धांत

8.5.2 व्योगत्स्की का अधिगम पर सामाजिक सांस्कृतिक परिदृश्य एवं संज्ञानात्मक विकास

8.5.3 भाषा एवं संज्ञान

8.5.4 सैद्धांतिक परिदृश्य एवं षिक्षा के बोध में तात्कालिक बदलाव

8.5.4.1 अध्यापक के कार्यों से यह कैसे संबंधित है?

8.6 सारांष

8.7 इकाई के अंत में अभ्यास

8.8 बोध प्रष्नों के उत्तर

8.9 संदर्भ पुस्तकें

8.1 प्रस्तावना

पिछली इकाइयों में आपने बच्चों की विकास की प्रक्रिया के विषय में पढ़ा और सीखा कि विकास के विभिन्न पक्षों में इसका अध्ययन किया जा सकता है। इकाई 7 में आपने बच्चों के शारीरिक विकास के विषय में सीखा। यह इकाई संज्ञानात्मक विकास के संप्रत्यय एवं प्रक्रियाओं की व्याख्या करती हैं। इस इकाई को पढ़ते समय यह ध्यान रखना आवष्यक है कि विकास के सभी पक्ष, शारीरिक, संज्ञानात्मक और समाजोसंवेगात्मक आपस में एक–दूसरे से संबंधित है और एक–दूसरे से अलग नहीं किए जा सकते हैं। इनका अलग–अलग अध्ययन करने से विकास को गहराई से समझने में सहायता मिलती है। बच्चों को प्रेक्षित कर, उनकी अंतःक्रियाएँ सुनकर एवं अपनी कक्षा में उनकी प्रतिक्रियाओं द्वारा आपको यहाँ पढ़ाए जा रहे संप्रत्ययों को समझने व अपने उदाहरण ढूँढ़ने में मदद मिलेगी।

8.2 उद्देष्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आपः

- संज्ञानात्मक विकास के सिद्धांत की व्याख्या कर सकेंगे;
- अध्यापक के रूप में अपने कार्यकलापों से संज्ञानात्मक विकास को संबंधित कर सकेंगे;
- संज्ञानात्मक विकास के विभिन्न परिदृश्यों पर चर्चा कर सकेंगे;
- उन तरीकों पर विचार कर सकेंगे जिनमें बच्चे आनंदपूर्वक ढंग से सीखते हैं;
- षिक्षा को समझने के तात्कालिक बदलावों से परिचित हो सकेंगे; और

- किसी आयु एवं स्तर के बच्चों के सीखने में अध्यापकों की भूमिका को उचित ढंग से विवेचना कर सकेंगे।

8.3 संज्ञानात्मक विकास का प्रत्यय

बच्चों के संज्ञानात्मक विकास को समझने के लिए उनके दैनिक जीवन व अंतःक्रियाओं को सावधानी व निकटता से देखने की आवष्यकता है। इस विषय पर सूक्ष्मदृष्टि डालने में निम्नलिखित दो परिस्थितियाँ उपयुक्त होगी।

परिस्थिति 1

एक पिता, उसकी 11 वर्षीय बेटी फरीदा एवं 5 वर्षीय बेटा अब्दुल, अपने घर में विभिन्न आकार के बर्तनों में पीने का पानी भर रहे हैं, उस दौरान उनके मध्य निम्नलिखित बातचीत होती हैः

पिताः इन दो बर्तनों में से हमने किसमें ज्यादा पानी भरा हैः लम्बे बर्तन में या चौड़े बर्तन में।

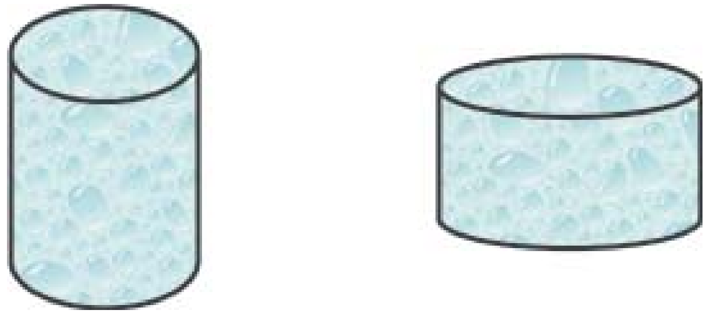

फरीदा : *मैं नहीं कह सकती; दोनों में समान मात्रा में पानी हो सकता है।*

अब्दुल (हस्तक्षेप करते हुए): *नहीं पिताजी, (लम्बे बर्तन की ओर इषारा करते हुए) इसमें ज्यादा पानी भरा है।*

पिताः *क्यों?*

अब्दुलः *दूसरे बर्तन की अपेक्षा इसकी ऊँचाई ज़्यादा है।*

परिस्थिति 2

एक विद्यालय में गणित पढ़ाने वाला एक अध्यापक, 11 वर्ष के बच्चे सोनू से मिलता है जो ट्रैफिक सिग्नल पर पत्रिकाएँ बेचता है। सोनू पढ़ना और लिखना नहीं जानता है। वह कभी विद्यालय नहीं गया। फिर भी, वह गणनाएँ करने में बहुत अनुकूलित है। किसी खरीददार से लेने वाला धन वह बहुत तेजी से जोड़ता है, वह वापस करने वाले धन को तेजी से घटाता है और हमेषा सही होता है। वह पूर्व निर्धारित अनुपात में अपने व अपने साथियों के मध्य धन सही–सही बाँट लेता है और दिन के अंत में वह वह अपने पूरे दिन की बिक्री का हिसाब एवं लाभ की गणना मौखिक ही लगभग सटीक कर लेता है।

वह बिक्री और लाभ का अनुमान व अंदाजा लगा सकता है। यद्यपि सोनू से मिलने के बाद अध्यापक आष्चर्यचकित है कि जिन बच्चों को वह विद्यालय में पढ़ाता है वे गणना में इतने अच्छे क्यों नहीं हैं। वह 10–11 वर्ष की आयु वर्ग की एक कक्षा में भी पढ़ाता है।

यहाँ दी गई दोनों परिस्थितियाँ असाधारण नहीं है। हममें से बहुत इस प्रकार की परिस्थितियों सें दो–चार होते हैं। इन्हें तो हम इसमें विनोद का अनुभव करते हैं या भूल

जाते हैं। यदि हम ऐसी परिस्थितियों की विवेचना करें तो हम ऐसी बहुत सी मनोवैज्ञानिक व सामाजिक प्रक्रियाओं को समझने में सक्षम हो सकते हैं, जो बच्चों एवं सभी व्यक्तियों के विकास में महत्वपूर्ण हैं।

पहली परिस्थिति यह प्रदर्षित करती है कि विभिन्न आयु वर्ग के बच्चे एक ही प्रष्न का भिन्न–भिन्न उत्तर देते हैं। इन प्रष्नों को समझने के उनके तरीके भी अलग–अलग होते हैं और उनके द्वारा प्रयुक्त तर्क भी। दूसरी परिस्थिति पर दृष्टिपात करने पर हमें ज्ञात होता है कि समान आयु के बच्चों की गणना करने की योग्यताएँ अलग–अलग होती हैं क्योंकि शायद वे अलग–अलग परिस्थितियों में बड़े हो रहे हैं। ऐसा क्यों होता है, यह समझने के लिए हमें संज्ञानात्मक विकास की विवेचना करनी होगी। सामान्य अर्थ में, संज्ञानात्मक विकास एक प्रक्रिया है जिसमें रोध (विचारना) विकसित होता है। यह तार्किक विचार, नवीन विचारों के अर्थ समझना, समस्या समाधान जैसी मानसिक एवं बौद्धिक प्रक्रिया का क्रमिक विकास है जो लम्बे समय तक चलता है। यद्यपि संप्रत्यय निर्माण की प्रक्रिया भी संज्ञान का एक भाग है। उदाहरणार्थः, आप किसी नई अजान वस्तु के विषय में कैसे जानते हैं, कैसे इसका अनुभव करते हैं, कैसे इसे समझते हैं या इसका प्रत्यय विकसित करते हैं, सभी संज्ञान की विषयवस्तु है। षिक्षण–अधिगम के दौरान कई नए संप्रत्यय विकसित होते हैं, बहुत से नए अनुभव विकसित होते हैं और कई दूसरी मानसिक प्रक्रियाएँ संचालित होती हैं। यह सब संज्ञान से संबंधित हैं।

संज्ञानात्मक विकास एक ऐसा विषय है जिसमें मनोविज्ञान में बहुत से शोध अध्ययन हुए हैं और हो रहे हैं। संज्ञानात्मक विकास के बहुत से सिद्धांत हैं जो अलग–अलग और कभी–कभी विरोधाभासी विचार देते हैं। यद्यपि निम्नलिखित मुद्दों पर सहमति प्रतीत होती हैः

- संज्ञानात्मक विकास का बहुत बड़ा भाग बाल्यावस्था में विकसित होता है; अर्थात् संज्ञानात्मक विकास में जीवन के प्रारंभिकष्वर्ष निर्माणात्मक हैं।

- संज्ञानात्मक विकास, विकास के समान एक क्रमिक प्रक्रिया है; कुछ योग्यताएँ अन्य से पहले विकसित होती हैं। उदाहरणार्थ, कोई भी बच्चा सामान्य गणितीय क्रियाओं को करने की मानसिक योग्यता विकसित होने से पूर्व कठिन गणितीय समस्याओं का समाध ाान नहीं कर सकता।

- संज्ञानात्मक विकास बहुत आंतरिक होता है, यह केवल विचारों व क्रियाओं में प्रदर्षित होता है। उदाहरण के लिए, जब तक कोई बच्चा लिखकर, मौखिक या क्रिया करके किसी समस्या का समाधान न करे, यह जानना संभव नहीं है कि वह जोड़ कर सकता है या नहीं।

- इस प्रक्रिया को सार्थक रूप से सामाजिक परिस्थितियाँ प्रभावित करती हैं। जैसे कि दूसरी परिस्थिति में, सामान्य अंकगणित के प्रति सोनू की अनुकूलता उसके सामाजिक परिवेष के दैनिक अनुभवों से काफी हद तक प्रभावित हुई।

- विभिन्न बच्चों में संज्ञानात्मक विकास की गति भिन्न–भिन्न होती है। आपकी कक्षा का प्रत्येक विद्यार्थी नवीन प्रत्यय को सामन दर तथा समान विधि से समझने में सक्षम नहीं होगा।

बोध प्रश्न

टिप्पणीः क) अपने उत्तर दिए गए रिक्त स्थान में लिखिए।

ख) अपने उत्तर को इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से मिलाइए।

1) (पहली परिस्थिति के समान) एक उदाहरण दीजिए जिसमें आप विभिन्न आयु के दो बच्चों को एक ही समस्या के प्रति समान दृष्टिकोण दर्षाते हुए पहचान सकें।

....

....

....

....

2) क्या आप सोचते हैं कि इन परिस्थितियों को समझना, एक अध्यापक के रूप में आपकी मदद कर सकता है?

....

....

....

....

....

8.4 संज्ञानात्मक विकास का अध्ययन अध्यापकों के लिए क्यों आवष्यक है?

संज्ञानात्मक विकास को समझने के लिए अध्यापक को इस विकास की विभिन्न अवस्थाओं एवं प्रक्रियाओं का अध्ययन करना होगा। जैसा कि पहले भाग में कहा गया है, संज्ञानात्मक विकास एक अध्यापक को बताता है कि बच्चा कैसे सोचता है, संसार का अनुभव कैसे करता है और विचार कैसे जन्म लेते हैं? एक अध्यापक, जो इस प्रक्रिया की समझ रखता है, बच्चों की विभिन्न आयु में एक–दूसरे से भिन्न–भिन्न अधिगम आवष्यकताओं के महत्व को समझ सकता है। वह यह भी समझने में सक्षम होगा कि कैसे असमान वातावरण के बच्चे अलग–अलग तरह से सीखते हैं। यह बोध उसे अपनी कक्षा में बच्चों की सोच के अनुरूप विषयज्ञान का संगठित करने के योग्य बनाएगा अर्थात् एक अध्यापक ज्यादा बेहतर ढंग से बच्चों की सोच से मेल खाती अपनी षिक्षण विषयवस्तु, विषयवस्तु के पढ़ाने के क्रम और षिक्षण विधि का चयन कर सकता है। वह इस प्रकार की क्रियाओं की योजना बना सकता है जो बच्चों को उच्च स्तरीय चिंतन की दिषा में ले जाएँ। वह यह अनुभव कर सकता है किः

- उत्पाद की बजाय अधिगम प्रक्रिया पर ध्यान अधिक केन्द्रित होना चाहिए।
- प्रत्येक बच्चे के अधिगम में सम्मिलित होना महत्वपूर्ण है।
- प्रत्येक बच्चा अलग तरह से सीखता है अतः विभिन्न प्रकार की षिक्षण पद्धतियों के अभ्यास की आवष्यकता है। एक षिक्षण उपागम सभी बच्चों की अधिगम आवष्यकताओं की पूर्ति नहीं कर सकता है।

- अध्यापक बच्चों के लिए चारों ओर के संसार से जुड़ने के अवसर उत्पन्न करने और क्रियान्वित करके अधिगम में मदद करता है। इससे बच्चों को संसार को समझने और ज्ञान की संरचना करने की क्षमता विकसित होती है।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा (National Curriculum Framework – NCF), 2005 नामक दस्तावेज में चर्चा की गई है कि बच्चों की षिक्षा किस प्रकार संगठित होनी चाहिए? (पाठ्यक्रम, विषयवस्तु एवं षिक्षण–अधिगम आदि), राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा, 2005 अध ययन को उस अध्ययन से अलग रूप में प्रत्ययित करती है जो हमने अपने बाल्यकाल में की है। यह परंपरागत षिक्षण से प्रगतिषील षिक्षण की ओर बदलाव का सुझाव देता है। इसमें कक्षाएँ एवं षिक्षण–अधिगम को षिक्षार्थी–केन्द्रित रूप में प्रक्षेपित किया है जिसमें क्रिया, खोज एवं वार्तालाप पर जोर है। ज्ञान के निर्माण में बच्चे की भूमिका को महत्वपूर्ण और कार्यषील माना गया है। यह विषय 2010 में लागू हुए षिक्षा के अधिकार (Right to Education – RTE) अधिनियम में भी प्रतिलक्षित होते हैं। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा, 2005 बच्चों के संज्ञानात्मक विकास के कुछ महत्वपूर्ण सिद्धांतों की समझ पर आधारित है। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा, 2005 और षिक्षा का अधिकार, दोनों अध्यापकों, बच्चों और षिक्षण–अधिगम पर उपादेयी है। ये पुनः इस आवष्यकता पर बल देते हैं कि एक अध्यापक को संज्ञानात्मक विकास के कुछ आधारभूत प्रत्ययों व सिद्धांतों का बोध होना चाहिए। अगले भाग में हम ऐसे ही दो सिद्धांतों व उनसे जुड़े प्रत्ययों पर चर्चा करेंगे।

8.5 संज्ञानात्मक विकास को समझने के लिए सिद्धांत एवं परिप्रेक्ष्य

सामान्यतः बच्चों के संज्ञान, अधिगम एवं विकास की प्रक्रिया को दो सुप्रसिद्ध सिद्धांतोंः जीन पियाजे का संज्ञानात्मक विकास का सिद्धांत एवं लेव.एस. व्योगोत्सकी के बच्चों के अधिगम एवं विकास के समाजोसांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में स्पष्ट किया गया है जिनका विवरण निम्नलिखित है।

8.5.1 पियाजे का संज्ञानात्मक विकास : संज्ञानात्मक विकास की केन्द्रीय प्रक्रियाएँः संज्ञानात्मक विकास की अवस्थाएँ; पियाजे का सिद्धांत एवं विद्यालय

मनुष्य कैसे सोचते हैं? वे विष्व का कैसे अनुभव करते हैं? शैशवास्था से प्रौढ़ावस्था तक संसार के विषय में ज्ञान कैसे विकसित होता है? जैसे–जैसे मनुष्य बड़ा होता है वह संसार को कैसे बेहतर समझने लगता है। ये वे प्रष्न हैं जिनको समझने के लिए हम जीन पियाजे द्वारा किए गए सिद्धांत के आधार पर प्रयास कर सकते हैं। उनके विचार चिह्न के साथ साथ ज्ञान के अन्य बहुत से पक्षों को समझने के लिए भी महत्वपूर्ण हैं।

> पियाजे के विचार इषारा करते हैं कि कोई ज्ञान संसार में पूर्ववर्ती नहीं है जो बच्चों को पढ़ाया जा सके। न ही ज्ञान, बच्चे में स्वयं आता है। ज्ञान विकसित होता है जब बच्चा संसार में क्रिया करता है। वे लिखते हैं कृकृ "वस्तुओं को समझने के लिए, बच्चों को उन पर क्रिया करनी होती है और उनमें बदलाव आते हैं" (पियाजे, 1970, पृ. 104)। उनका सिद्धांत बच्चे कैसे ज्ञान को निर्मित करते हैं? को भी समझने में मदद करता है। अतः इसे "निर्माणवाद" (constructivism) का एक सिद्धांत भी माना जाता है।
>
> हम जिन नूतन बदलावों की बात राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा, 2005 के संदर्भ में कर रहे हैं, ऐसे ही विचारों पर आधारित है (इसे हम इकाई के अंत में समझने का प्रयास करेंगे)।

पहले हम यह जानते हैं कि पियाजे कौन थे और उन्होंने यह सिद्धांत कैसे विकसित किया?

पियाजे (1896–1980) का जन्म स्वीट्ज़रलैंड में हुआ। वह जीव विज्ञान के विद्यार्थी थे और मनोविज्ञान एवं दर्षन में भी गहरी रुचि रखते थे। अल्फ्रेड बिने प्रयोगषाला में बुद्धि–लब्धि परीक्षण संबंधी शोध में सहायता करते समय, संज्ञान के अध्ययन में उनकी रुचि जाग्रत हुई। अपने कार्य के दौरान, वह बहुत से बच्चों से मिले एवं उन्होंने बच्चों के चिंतन से संबंधित कुछ रोचक बातें प्रेक्षित की। उन्होंने अनुभव किया कि बड़े बच्चे समान परीक्षण पर अधिक प्रष्नों का उत्तर देने में सक्षम थे। बड़े बच्चों द्वारा लगाए गए तर्क एवं उत्तरों में गुणात्मक भिन्नताएँ भी थीं। अर्थात् छोटे बच्चों की तुलना में, बड़े बालक प्रौढ़ों के समान तर्क लगाने में सक्षम थे। पियाजे ने यह भी अनुभव किया कि बच्चों द्वारा दिए गए गलत उत्तर, सही उत्तरों की तुलना में उनकी सोच एवं तर्क के विश्लेषण में अधिक उपयोगी हैं। इसके अतिरिक्त, एक ही आयु के बच्चों के गलत तर्कों के मध्य समानता थी।

बोध प्रष्न

टिप्पणीः क) अपने उत्तर दिए गए रिक्त स्थान में लिखिए।

ख) अपने उत्तर को इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से मिलाइए।

3) पहली परिस्थिति को याद कीजिए जो हमने इस इकाई के प्रारंभ में पढ़ी। पियाजे द्वारा बताए गए प्रेक्षणों व फरीदा तथा अब्दुल के उत्तरों के मध्य समानताएँ लिखिए।

....

....

....

....

....

इन विचारों के साथ पियाजे, संज्ञानात्मक विकास की प्रक्रिया को समझने की दिषा में आगे बढ़े। अपने अनुभवों से उन्होंने समझा कि नियंत्रित एवं संरचनात्मक वातावरण में बच्चे स्वयं को अभिव्यक्त करने में सक्षम नहीं होते। अतः उन्होंने बच्चों से अंतःक्रिया का अलग तरीका अपनाया। वे बच्चों से उसी वातावरण में मिलें, जिनमें वे निष्चित थे अर्थात् बच्चों का प्राकृतिक वातावरण। उन्होंने अपनी दी हुई क्रियाओं पर कार्य करते हुए बच्चों का अवलोकन किया व उनसे बातचीत की। जब बच्चे उनसे अंतःक्रिया कर रहे थे तब उन्होंने बीच में हस्तक्षेप नहीं किया। उन्होंने बच्चों से एक प्रष्न पूछा और बच्चों की प्रतिक्रिया के आधार पर अगले प्रष्न का निर्माण किया। इस प्रक्रिया का उन्होंने खाका बनाया कि जीवन में प्रारंभिक वर्षों में चिंतन की प्रक्रिया एवं ज्ञान कैसे विकसित होता है? उन्होंने जो विधि या उपागम अपनाया, उपचारात्मक परीक्षण कहलाता है और नैसर्गिक विधि अपनाने के कारण इसे आनुवंषिक ज्ञान मीमांसा भी कहा जाता है।

संज्ञानात्मक विकास की केन्द्रीय प्रक्रियाएँः पियाजे ने तीन केन्द्रीय प्रत्यय प्रतिपादित किएः

क) ***संगठन की पद्धतियाँ :*** पियाजे ने प्रतिपादित किया कि लोग अपने विचारों को नियोजित करने की आदत के साथ जन्म लेते हैं। ये नियोजन मनोवैज्ञानिक (मानसिक)

वर्ग हैं, जिनमें व्यक्ति अपना ज्ञान संगठित करते हैं। ये नियोजन एवं पद्धतियाँ विकसित होती हैं और जैसे–जैसे वह शैशवास्था से प्रौढ़ावस्था की ओर अग्रसर होता है, अनुभवों के साथ और जटिल होती जाती हैं। उदाहरणार्थ, रमन, एक बच्चा है जो अपनी पूर्व बाल्यावस्था में एक कुत्ते को पहली बार देखता है। जब वह पहली बार कुत्ता देखता है, क्या वह जानता है कि जो पषु वह देख रहा है, एक कुत्ता है? नहीं। पर पहले कुछ बार कुत्ते को देखकर उसके अनुभव उसे कुत्ते को समझने की पद्धति विकसित करने में मदद करते हैं। प्रारंभ के कुछ बार, जब वह एक कुत्ता देखता है, वह यह नहीं समझ पाता कि यह क्या है? वह कुत्ते को देखता है। वह पाता है कि उसके चार पैर हैं, एक रोयेदार पूँछ हैं, यह भौंकने की आवाज निकालता है आदि। उसकी माँ उसे बताती है कि जो उसने देखा है, वह कुत्ता है। अब उसमें कुत्तों की समझ, उनकी गुण पद्धति विकसित होती है। अगली बार, जब वह कुत्ता देखता है, उसे आसानी से पहचान लेता है। हम जो कुछ भी जानते हैं उसकी ऐसी ही समान मानसिक पद्धतियाँ विकसित होती हैं। ये पद्धतियाँ नए अनुभवों के साथ निरंतर विकसित होती हैं एवं अधिक जटिल हो जाती है। इस प्रक्रिया को निम्नलिखित प्रत्यय स्पष्ट करते हैं:

ख) **अनुकूलन (Adaptation):** अनुकूलन, जैसा कि आपने जीव विज्ञान में पढ़ा है, एक प्रक्रिया है जिससे प्राणी अपने वातावरण में समायोजित होते हैं। यदि आप याद करें, हमने पढ़ा है कि पियाजे जीव विज्ञान के विद्यार्थी थे। अतः उनके बहुत से सिद्धांत जीव विज्ञान से लिए गए हैं। जैसे मनुष्य वातावरण से अनुकूलित होते हैं, उनके चिंतन उनके द्वारा अनुभव किए जाने वाले परिवर्तन से अनुकूलित होते हैं। ये परिवर्तन मानसिक पद्धतियों में परिवर्तन के लिए आधार बनते हैं।

यहाँ दो उदाहरण लेते हैं जो कुत्तों को समझने से संबंधित हैं:

उदाहरण 1

रमन जानता है कि कुत्ता किस प्रकार का जानवर है? वह पहली बार बिल्ली को देखता है। वह देखता है कि इस जानवर के भी चार पैर और रोयेदार पूँछ हैं, ठीक कुत्ते को समझने जैसी पद्धति। वह बिल्ली को कुत्ता कहता है। रमन ने क्या किया? उसने कुत्ते से संबंधित ज्ञान/पद्धति को उस नए पषु से समझने में प्रयोग किया। यद्यपि बिल्ली, कुत्ते जैसी नहीं दिखती, वह बिल्ली को कुत्ता समझ लेता है। नए अनुभव का पहले से स्थापित पद्धति से इस प्रकार जुड़ना ***आत्मसातीकरण (assimilation)*** *कहलाता है। यह विचारों के अनुकूलन की एक प्रक्रिया है।*

उदाहरण 2

एक दिन रमन को बिल्ली के साथ नया अनुभव होता है। वह देखता है कि बिल्ली, कुत्तों की तरह नहीं भौंकती, वह कुछ अलग आवाज निकालती है। यह उसकी पद्धति से नहीं मिलता। धीरे–धीरे वह दोनों जानवरों के मध्य और अन्तर देखता है। एक दिन अपनी माँ से बातचीत में वह बिल्ली को कुत्ता कहता है; तब उसकी माँ सुधार करती है। वह कहती है: रमन, यह कुत्ता नहीं है, यह बिल्ली है। अब रमन को अपने कुत्ते को समझने की वर्तमान पद्धति में परिवर्तन करना होगा (जिसमें वह बिल्ली को समाहित करता है)। अब बिल्लियों को समझने की नई पद्धति होगी। वर्तमान पद्धति में परिवर्तन (एवं नवीन पद्धति का विकास), जिससे नए अनुभवों को समझा जा सके, ***समायोजन (Accommodation)*** *कहलाता है। यह अनुकूलन की द्वितीय प्रक्रिया है।*

ग) **साम्यधारण (Equilibration):** जब रमन अपनी कुत्ता पहचानने की पद्धति में, बिल्ली से संबंधित प्रेक्षणों को सटीकता से नहीं रख पाया, उसे कुछ मानसिक दुविधा या असंतुलन की स्थिति का अनुभव अवष्य हुआ होगा। इसे **संज्ञानात्मक विषमता (cognitive disequilibrium)** कहते हैं। वह इस असंतुलन को दूर करने व संतुलन प्राप्त करने का प्रयास करेगा और इस पुनः संतुलन प्राप्त करने की प्रक्रिया में एक नई मानसिक पद्धति विकसित होगी – उसने नवीन ज्ञान का निर्माण किया (बिल्लियों और कुत्तों के बारे में)। नए अनुभव को समझ कर संतुलन की खोज की यह प्रक्रिया साम्यधारण कहलाती है। यह वह प्रक्रिया है जो बच्चे को अपने अनुभवों से एक बेहतर और अधिक परिष्कृत ज्ञान की ओर ले जाती है। यह सभी प्रक्रियाएँ बच्चे के अनुभवों व क्रियाओं, सामाजिक अंतःक्रियाओं व प्रौढ़ता की जैविक प्रक्रियाओं से प्रभावित होती हैं।

आत्मसातीकरण, समायोजन और साम्यधारण की प्रक्रियाएँ संज्ञान के विकास की केन्द्रीय प्रक्रियाएँ हैं। यह प्रक्रियाएँ बच्चों को बढ़ने के साथ बड़ों की भाँति परिष्कृत रूप से संसार को समझने के लिए निरंतर अग्रसर करती हैं। इस प्रक्रियाओं के आधार पर पियाजे ने संज्ञानात्मक विकास की चार अवस्थाओं की व्याख्या की। अगले चरण में इनकी विस्तार से व्याख्या की गई है।

बोध प्रष्न

टिप्पणीः क) अपने उत्तर दिए गए रिक्त स्थान में लिखिए।

ख) अपने उत्तर को इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से मिलाइए।

4) आत्मसातीकरण, समायोजन व साम्यधारण की प्रक्रियाओं की नए उदाहरणों की सहायता से व्याख्या कीजिए।

....

....

....

....

....

5) यह बोध आपको कक्षा में नए प्रत्ययों के षिक्षण में किस प्रकार सहायक होगा? पहली कक्षा के बालक को एक सेब और एक संतरे में अंतर को समझने में आप उसकी कैसे मदद करेंगे? की व्याख्या करें।

....

....

....

....

....

....

संज्ञानात्मक विकास की अवस्थाएँः पियाजे का सिद्धांत कहता है कि संज्ञानात्मक विकास सार्वभौमिक रूप से चार अवस्थाओं के एक प्रारूप का पालन करता है। जैसे एक व्यक्ति उच्च अवस्थाओं की ओर बढ़ता है, उसका चिंतन और अधिक परिष्कृत व विकसित होता है। पहली तीन अवस्थाएँ जन्म से लगभग ग्यारह वर्ष की आयु तक आती हैं अर्थात् मुख्यतः प्रारंभिक बाल्यावस्था से उत्तर बाल्यावस्था तक। चौथी अवस्था, संज्ञानात्मक विकास की उच्चतम अवस्था है और प्रधानतः पूर्व–किषोरवस्था से प्रौढ़ावस्थातक देखी जाती है। संज्ञानात्मक विकास एक अवस्था से दूसरी अवस्था में नहीं होता अपितु प्रत्येक अवस्था में विकास का एक क्रम है। यह अवस्थाएँ हैंः

- इन्द्रीय क्रियात्मक अवस्था (Sensorimotor Stage)
- प्राक्–परिचालक अवस्था (Pre-operational Stage)
- प्रत्यक्ष परिचालक अवस्था (Concrete Operational Stage)
- औपचारिक परिचालक अवस्था (Formal Operational Stage)

इन्द्रीय क्रियात्मक अवस्था (Sensorimotor Stage): यह अवस्था जन्म से दो वर्ष तक होती है। जैसा क नाम से स्पष्ट है, बच्चे इस अवस्था के प्रारंभिक भाग में संसार के विषय में अपनी ज्ञानेन्द्रियों – स्पर्ष, स्वाद, श्रवण, दृश्य एवं घ्राण के माध्यम से अनुभव करते हैं। बच्चे का व्यवहार मुख्यतः चूसने व रोने जैसी सहज क्रियाएँ होती हैं। जैसे–जैसे उनकी आयु बढ़ती है, वे कुछ अधिक जटिल शारीरिक क्रियाएँ जैसे रेंगना, शरीर हिलाना और बड़बड़ाना करने लगते हैं। इस अवस्था के अन्त तक आते–आते वे लक्ष्य केन्द्रित क्रियाओं को करने में सक्षम हो जाते हैं। वे किसी का पीछा करने, बॉक्स में से अपने खिलौने निकालने और उन्हें पुनः रखने आदि में सक्षम हो जाते हैं। इस अवस्था में होने वाले विकास में समाहित होते हैंः

- सहज क्रियाओं का समन्वय (Coordinating Reflexes)
- शारीरिक क्रियाओं पर श्रेष्ठ नियंत्रण (Greater Control over body movements)
- सामान्य चालक क्रियाओं का समन्वय (Coordinating simple motor actions)

इस अवस्था में एक और महत्वपूर्ण विकास वस्तुगत स्थायित्व (object performance) होता है। इस अवस्था के प्रारंभिक वर्षों में, षिषु की सोच इतनी विकसित नहीं होती कि वह यह समझ सके कि यदि वस्तु उसे दिखाई नहीं दे रही हैं, अथवा अनुभव में नहीं है, तो भी उसका अस्तित्व रहता है। आपने जरूर देखा होगा कि किसी षिषु से कोई वस्तु ले लेना या इसे भ्रमित कर देना बहुत आसान होता है। यद्यपि, जैसे ही वह दो वर्ष की आयु का होता है, वह दिखाई न देने वाले अपने खिलौनों को ढूँढ़ने में सक्षम होता है। इसे ही **वस्तुगत स्थायित्व (object performance)** कहते हैं। इस आयु में भाषा विकास भी प्रारंभ हो जाता है। पहले बड़बड़ाने से भाषा के प्रथम चिह्न तक, सभी परिलक्षित होते हैं, पर अगली अवस्था में ये अधिक प्रभावी ढंग से विकसित होते हैं।

प्राक–परिचालक अवस्था (Pre-operational Stage) : यह अवस्था दो से सात वर्ष की आयु की है। प्रारंभिक विद्यालय के अध्यापकों के लिए इस अवस्था को समझना महत्वपूर्ण है क्योंकि इस अवस्था के उत्तरार्ध में बच्चा विद्यालय जाना प्रारंभ कर देता है। पूर्व अवस्था में वर्णित की गई मानसिक प्रक्रियाएँ इस अवस्था में ठीक प्रकार विकसित होती हैं। इन्हीं प्रक्रियाओं के आधार पर विकास होता है। इस तथ्य के होते हुए भी कि बच्चे में विभिन्न क्रियाओं की पद्धतियाँ होती हैं, उसके प्रौढ़ की भांति चिंतन में बहुत–सी सीमाएँ होती हैं।

बच्चा किसी क्रिया को शारीरिक रूप से करता है न कि मानसिक रूप से अर्थात् बच्चा किसी कार्य को करने या पलटने की मानसिक कल्पना नहीं कर सकता है। किसी क्रिया को मानसिक तौर पर करने या बदलने की क्षमता को परिचालकता या परिचालक चिंतन (Operational Thinking) कहते हैं। चूँकि यह द्वितीय अवस्था, ऐसे चिंतन के विकास से पूर्व आ जाती है अतः इसे प्राक परिचालक (Pre-operational) कहते हैं। यह वह अवस्था है जो परिचालक चिन्तन के लिए बच्चे को तैयार करती है। इस दिषा में पहला कदम भाषा–विकास है। बच्चे वस्तुओं के नाम व उन्हें पहचानना प्रारंभ कर देते हैं भले ही उन्होंने वास्तविक रूप में उन्हें न देखा हो। उदाहरणार्थ, वे एक सेब का चित्र देखकर उसे पहचान सकते हैं। वे एक खाली कप से चाय पीने की क्रिया का प्रतीकात्मक प्रदर्षन कर सकते हैं (वुलफ्लॉक, 2004, पृ. 67)।

यद्यपि बच्चों के विचारों में मुख्यतः एकल–दिषीय तर्क (one-way logic) होता है। इसे निम्नांकित परिस्थिति में समझा जा सकता हैः

रिंकू (आयु 5 वर्ष) एवं उसकी षिक्षिका सुमन एक क्रिया पर कार्य कर रहे हैं। सुमन, रिंकू को समान मात्रा में पानी से भरे एक जैसे दो गिलास दिखाती है।

सुमनः रिंकू, क्या दोनों गिलास में बराबर मात्रा में पानी है या एक में ज्यादा है?

रिंकूः दोनों में बराबर पानी है।

रिंकू के सामने ही सुमन एक गिलास का पानी, एक लम्बे गिलास में स्थानांतरित करती है और दूसरे गिलास को पानी एक चौड़े गिलास में स्थानान्तरित करती है।

सुमनः अब बताओ, क्या इन दोनों गिलासों में बराबर पानी है या एक में ज्यादा है?

रिंकू लम्बे गिलास की ओर इषारा कर कहती हैः इसमें ज्यादा है।

सुमनः क्यों?

रिंकू लम्बे गिलास में पानी का स्तर छूकर कहती हैः देखिए, यह ज्यादा है।

यह क्रिया संरक्षण (conservation) के सिद्धांत पर आधारित है। यह सिद्धांत कहता है कि यदि किसी वस्तु की दिखावट में परिवर्तन हो जाए, तो भी इसके गुण समान रहते हैं। लगता है रिंकू यह प्रत्यय नहीं जानती। वह यह देखने में सक्षम नहीं है कि चौड़ाई ने ऊँचाई को प्रतितुलित (compensate) कर दिया है। रिंकू केवल पानी की ऊँचाई पर ध्यान दे रही है अर्थात् वह एक समय में केवल एक पक्ष पर ध्यान दे सकती है। वह विकेन्द्रित (decentre) होने या एक ही समय एक से अधिक पक्षों को समाहित करने (चौड़ाई के बारे में न सोचने) में सक्षम नहीं है। वह अपने विचारों को प्रतिवर्तित (reverse) करने में भी सक्षम नहीं है (यह देख पाने में सक्षम न होना कि पानी बराबर था, जब समान गिलासों से स्थानांतरित किया गया) संरक्षण की योग्यता में कुछ और संबंधित प्रत्यय (जैसे वर्गीकरण एवं क्रमांकन) भी आते हैं, जो बच्चे में पूर्णतया विकसित नहीं हुए। इसके विषय में हम सिद्धांत की अगली अवस्था में अधिक पढ़ेंगे।

इस आयु के बच्चे न केवल पक्षों या विमाओं को, वरन् अपने विचारों को भी विकेन्द्रित करने में सक्षम नहीं हैं अर्थात् वे दूसरे व्यक्तियों के विचारों को भी संज्ञान में नहीं लेते। जैसे एक पाँच वर्ष का बच्चा सोचता है कि जैसे वह चारों ओर दौड़ने में आनंद का अनुभव करता है, उसकी माँ भी वैसा ही आनंद का अनुभव करती होगी; अतः वह अपनी माँ को अपने साथ दौड़ने के लिए बाध्य करता है। इसे केवल अपने विचारों पर केन्द्रित रहना या **आत्मकेन्द्रित (egocentrism)** कहते हैं।

हम सबने तीन से छः वर्ष की आयु वर्ग के बच्चे देखे हैं जो समूह में रहते हुए भी एक–दूसरे की नहीं सुनते, निरर्थक मुद्दों पर बातें करते हैं और कभी–कभी केवल अपने से बात करते हैं। यह भी आत्मकेन्द्रिता का ही एक परिणाम है जिसे सामूहिक एकालाप (collective monologue) कहते हैं। वही कारण है कि कक्षा पहली व दूसरी में बच्चे "स्वार्थी" दिखाई देते हैं और अध्यापकों के अनुदेषों का पालन कम करते हैं; पर अध्यापकों को यह समझना चाहिए कि यह जानबूझ कर नहीं किया गया है, यह उस आयु का विकासात्मक लक्षण है, जिसका वे अनुभव कर रहे हैं। यहाँ महत्वपूर्ण अधिगम यह हुआ कि संरक्षण, विकेन्द्रिता एवं प्रतिवर्ती चिंतन वे मूल क्रियाएँ हैं जिन पर गणितीय प्रत्यय, व्याकरण का सीखना, पढ़ना एवं लिखना आधारित हैं। प्राक–परिचालक अवस्था (Pre-operational Stage) में बच्चा इन योग्यताओं का उपयोग करने के लिए विकासात्मक रूप से तैयार नहीं होता है; अतः इन विषय वस्तुओं में अधिगम को अन्य प्रकार से संगठित करना अध्यापक की जिम्मेवारी है।

यह कक्षा में अध्यापक को कैसे प्रभावित करता है?

- 6 से 14 वर्ष तक की आयु में प्राथमिक विद्यालय का बच्चा पियाजे द्वारा बताई गई तीन अवस्थाओं से गुजरता है। 6 या 7 वर्ष की आयु (कक्षा पहली या दूसरी) में वह प्राक् परिचालक अवस्था के अंत पर होता है। यदि बच्चा पूर्व–विद्यालय कार्यक्रम से नहीं गुजरा है तो अध्यापक के लिए यह आवष्यक है कि वह उस बच्चे को क्रियाएँ करने, कहानियाँ सुनने व सुनाने तथा विविध प्रकार की सामग्री (जैसे गुटके आदि) से खेलने के पर्याप्त अवसर दे।
- अध्यापक को विषयवस्तु, इस प्रकार संगठित करनी होगी जिससे बच्चों को बोलने व प्रतीकों के प्रयोग के पर्याप्त अवसर मिलें।
- उन्हें ऐसे अनुभवों के अवसर देने होंगे जहाँ वे एकल–दिषीय तर्क का प्रयोग कर सके।
- जहाँ संरक्षण, विकेन्द्रिता एवं प्रतिवर्ती चिंतन की आवष्यकता होती है, वहाँ वह संरचनात्मक समस्याओं के समाधान की उम्मीद न करें।
- अध्यापक को अधिक षिक्षण सामग्री का प्रयोग करना होगा क्योंकि बच्चा परिचालक चिंतन के लिए तैयार नहीं है।
- अध्यापकों को बच्चों से दूसरों के दृष्टिकोणों को समझने की अपेक्षा नहीं करनी चाहिए, वरन् विभिन्न व्याख्याएँ करनी चाहिए, जहाँ दोनों साथ–साथ अधिगम कर सकें।
- सारे बच्चे उसके पास एक सी समस्या लेकर आ सकते हैं। यद्यपि उसने एक बार व्याख्या कर दी है। तथापि अध्यापक को कई बार अनुदेषन दोहराना होगा क्योंकि प्रत्येक बच्चे की समस्या अलग–अलग थी।
- अध्यापक को ऐसी क्रियाएँ करवानी होगीं जहाँ बच्चे धीरे–धीरे संरक्षण की ओर बढ़ें।
- अध्यापक को अधिगम कक्षा के निर्माण में सक्षम होना चाहिए। आत्म–अधिगम को बढ़ावा देने के लिए उसे विविध (स्थानीय) पदार्थों से भरपूर कक्षा में अधिगम वातावरण निर्मित करने की आवष्यकता है।

अगला चरण, संज्ञानात्मक विकास की प्रक्रिया को आगे ले जाएगा।

प्रत्यक्ष परिचालक अवस्था (Concrete Operational Stage) : यह अवस्था सात वर्ष से ग्यारह वर्ष की आयु तक रहती है अर्थात् मध्य विद्यालय आयु। इस अवस्था में बालक क्रियाओं को विकेन्द्रित व प्रतिवर्ती करने में मानसिक रूप से सक्षम हो जाते हैं। अतः वे संरक्षण सिद्धांत का प्रयोग कर सकते हैं। अब वे यह समझने में सक्षम होते हैं कि लम्बे बर्तन में ऊँचाई का स्तर ज्यादा होते हुए भी लम्बे व चौड़े बर्तन में पानी की समान मात्रा हो सकती है। यह विचारने की योग्यता निम्न प्रकार बढ़ती हैः (वुलफ्लॉक, 2008, पृ. 68)।

- बच्चे यह समझ सकते हैं कि यदि हम वस्तुओं की दी गई मात्रा में समान मात्रा जोड़े या घटाएँ तो वहाँ कोई परिवर्तन नहीं होता या वहाँ परिवर्तन के लिए क्षतिपूर्ति होती है।
- वे गुण के आधार पर वस्तुओं के वर्गीकरण में सक्षम है (विभिन्न आकारों की वस्तुओं मे ंसे सभी वर्गाकार वस्तुएँ उठाना)।
- वे क्रमांकीकरण (seriation) से युक्त तर्क के प्रयोग की क्षमता भी विकसित करते हैं अर्थात् वे $A < B < C$ जैसे क्रम को अनुभव कर सकते हैं। बच्चे समझ सकते हैं कि B, A से बड़ा हो सकता है पर उसी समय वह C से छोटा होगा।
- बच्चे प्रतिवर्ती आधार चिंतन की योग्यता विकसित कर लेते हैं अर्थात् वे यह समझने में सक्षम होते हैं कि यदि $4 + 2 = 6$,तो $6 - 2 = 4$ होगा।

संक्षेप में, इस आयु में बच्चा पूर्व अवस्था की बहुत–सी सीमाएँ पार कर लेता है अर्थात् बच्चा धीरे–धीरे दूसरों के दृष्टिकोण को समझने की योग्यता विकसित करता है (आत्मकेन्द्रिता से आगे बढ़ना)।

उसमें प्रत्यक्ष ज्ञानात्मक (perceptual) या पर्यवेक्षित (observable) से प्रतीक आधारित तर्कपूर्ण चिंतन की ओर गति आरंभ होती है परंतु चिन्तन अभी भी भौगोलिक संसार पर आधारित होता है। प्रतिवर्ती चिंतन की योग्यता, अधिगम के नए अवसर खोलती है, अतः तर्क का तंत्र ठीक से विकसित होकर अधिक प्रौढ़ जैसा हो जाता है। बच्चा अब कुछ हद तक परिचालक चिंतन (operational thinking) करने में सक्षम होता है; यद्यपि बच्चे के विचार अभी भी पदार्थगत वास्तविकताओं पर आधारित होते हैं अर्थात् उसका तर्क अभी भी प्रत्यक्ष संसार से जुड़ा है, वह अमूर्त चिंतन नहीं कर सकता। इसीलिए इस अवस्था को प्रत्यक्ष परिचालक (concrete operational) कहते हैं।

बोध प्रष्न

टिप्पणीः क) अपने उत्तर दिए गए रिक्त स्थान में लिखिए।

ख) अपने उत्तर को इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से मिलाइए।

6) आप विचार करें कि आप इस आयु के बच्चों के लिए विषयवस्तु, पदार्थ एवं कक्षागत क्रियाओं का संगठन किस प्रकार करेंगे? (जैसा कि पहले वाले बॉक्स में सुझाव दिया गया है)।

....

....

....

....

औपचारिक परिचालक अवस्था (Formal Operational Stage) : यह अवस्था लगभग 11 वर्ष की आयु में प्रारंभ होती है और प्रौढ़ावस्था तक चलती है। याद रहे, प्रारंभ में यह बताया गया है कि यह अवस्था चिंतन के विकास की उच्चतम अवस्था है और बहुत से लोग इस अवस्था तक कभी नहीं पहुँचते। यह वह अवस्था है जब बच्चे उत्तर प्राथमिक कक्षाओं में होते हैं। इस अवस्था में, जैसा कि नाम से स्पष्ट है कि बच्चा परिचालक चिंतन के योग्य हो जाता है अर्थात् वह धीरे–धीरे अमूर्त चिंतन में सक्षम हो जाता है। उसके विचार केवल मूर्त वस्तुओं से बंधे नहीं रहते, वह प्रतीकों (अंकों) को समझ सकता है व चिंतन करता है। यह ध्यान देना महत्वपूर्ण है कि गणित और व्याकरण ऐसे विषय हैं जिनमें उच्च अमूर्त चिंतन की आवष्यकता होती है क्योंकि छात्र को प्रतीकों व ऐसे विचारों के साथ काम करना होता है जो मूर्त वास्तविकताओं में दृश्य नहीं हैं। यह केवल इसी अवस्था में होता है कि बच्चे में गणितीय चिंतन की योग्यता विकसित होती है। ऐसा चिंतन निगमनात्मक विवेचना (deductive reasoning), परिकल्पनात्मक (अनुमान आधारित) योग्यताओं की माँग करता है। आपने सायलेगिज्म (syllogism) (न्यायवाद) के बारे में अवष्य पढ़ा होगाः

सभी मनुष्य मरणषील हैं।

सुकरात एक मनुष्य हैं।

सुकरात मरणषील है।

इसमें निगमनात्मक चिंतन का प्रयोग है। यह निष्कर्ष कि सुकरात मरणषील है, प्रथम मुख्य अवधारणा जो सारे मनुष्यों के लिए है और दूसरी सूक्ष्म अवधारणा से निकाला (या निगमित) गया है। जब बच्चों में इस प्रकार के चिंतन की योग्यता विकसित होती है तभी वे "मान लो कि $x = y$" या कविता का भाव समझने में सक्षम होंगे। अध्यापक अब ऐसे कार्य देता है जिसमें अधिक अमूर्त चिंतन हो, जिसमें और अधिक क्रियात्मक प्रदर्षन हो। यद्यपि, अध्यापक को नहीं भूलना चाहिए कि चूँकि बच्चा ग्यारह वर्ष का है, वह अमूर्त चिंतन की योग्यता विकसित कर सकता है। यह एक प्रक्रिया है जो अपनी गति से चलती है; और जरूरी नहीं कि पूरी हो। अतः अध्यापक को विभिन्न बच्चों की विकासात्मक आवष्यकताओं को ध्यान में रखते हुए विषयवस्तु का चयन व संगठन करना चाहिए। इसका अर्थ है कि उसे अपने षिक्षार्थी को निकट से समझना होगा एवं उसकी विकासात्मक आवष्यकताएँ पहचाननी होंगी। यह उससे बच्चों के साथ काम करने, उनके क्रिया करने के दौरान उनका प्रेक्षण करने, उनसे बातचीत करने तथा एक वातावरण का निर्माण करने की अपेक्षा रखता है जहाँ प्रत्येक छात्र अभिव्यक्ति कर सके।

विद्यालय एवं पियाजे का सिद्धांतः यह सिद्धांत स्पष्ट करता है कि जैसे बच्चा बड़ा होता है, उसकी मानसिक प्रक्रियाओं में एक गुणात्मक परिवर्तन/सुधार होता है। यह परिवर्तन, संज्ञानात्मक विकास की कुछ अवस्थाओं में समझा जा सकता है। अधिगम की योग्यता विकास की अवस्था से संबंधित है। एक स्तर के बच्चे, उच्च स्तर के प्रत्ययों को समझने में सक्षम नहीं होते। इसी के साथ, विषमता को भी स्थान देने की आवष्यकता है (पियाजे के सिद्धांत के मूलभूत सिद्धांत याद कीजिए जो हमने इकाई के प्रारंभ में पढ़े)। इस रूपरेखा के अनुसार, अधिगम के लिए तैयारी एवं पाठ्यक्रम एवं कक्षाकक्ष प्रक्रिया इस प्रकार संगठित की जानी चाहिए जो बच्चे को उन परिस्थितियों की ओर ले जाएँ जिनमें संज्ञानात्मक विकास की प्रक्रिया एवं संतुलन की खोज के अवसर हों। अतः, षिक्षण–अधिगम एक समस्या–समाधान की तरह संचालित हो।

8.5.2 व्यगोत्सकी का अधिगम विषयक सामाजिक सांस्कृतिक परिदृश्य एवं संज्ञानात्मक विकास

पियाजे के कार्य को संपूर्ण विष्व में सराहना मिली क्योंकि इसने बच्चों के चिंतन एवं ज्ञान के विकास की प्रक्रिया पर प्रकाष डाला। यद्यपि उनके कार्यों की काफी आलोचना भी हुई। एक प्रमुख आलोचना यह है कि उनका सिद्धांत विभिन्न संस्कृतियों के बच्चों के प्रेक्षण पर आधारित नहीं है (हरगेनहॉन एवं ऑलसन, 2006)। यह देखा गया है कि पियाजे का सिद्धांत एवं कार्य विभिन्न परिवेषों के लोगों के संज्ञान की पूरी तरह से व्याख्या करने में सक्षम नहीं है (ईगन, 1983)। कभी–कभी यह भी कहा जाता है कि पियाजे का सिद्धांत सामाजिक प्रक्रियाओं पर समुचित ध्यान नहीं देता है जो संज्ञान को प्रभावित करती है। वास्तव में ऐसा नहीं है। अपने बहुत से कार्यों में पियाजे ने व्याख्या की है कि सामाजिक प्रक्रियाएँ (लोगों से अंतःक्रिया, संबंध आदि) संज्ञानात्मक विकास में बहुत महत्व रखती है (इनहेल्डर एवं पियाजे, 1958)।

सामाजिक प्रक्रियाओं का महत्व स्वीकारने के अतिरिक्त पियाजे ने ध्यान दिया कि प्रत्येक बच्चे में व्यक्तिगत रूप से चिंतन कैसे विकसित होता है। अतः इसे कभी–कभी वैयक्तिक संरचनावाद (individual constructivism) भी कहते हैं। बच्चे पर केवल व्यक्तिगत रूप से ध्यान देने की कभी–कभी आलोचना होती है।

कुछ लोगों की मान्यता है कि विचार एवं ज्ञान अनिवार्यतः सामाजिक प्रक्रियाओं में विकसित या निर्मित होते हैं परंतु पियाजे इस पर ध्यान नहीं देते। कुछ विचारकों ने विकास में सामाजिक एवं सांस्कृतिक प्रक्रियाओं (भाषा, रीतिरिवाज एवं अभ्यास, परिवार, कार्य आदि) को रेखांकित किया है। वे कहते हैं कि बालक लगातार अपने साथियों एवं प्रौढ़ों के साथ दैनिक संपर्कों में सीखते हैं एवं अधिगम की इस प्रक्रिया में चिंतन एवं ज्ञान विकसित होता है। विकास का यह स्वरूप समाजोसांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य (socio-cultural perspective) या सामाजिक संरचनावाद (social constructivism) कहलाता है।

बाल विकास के क्षेत्र में, यह एक स्वीकार्य विचार है कि बच्चों का समाजोसांस्कृतिक वातावरण उनके प्रौढ़ों के समान चिंतन के विकास को दिषा देता है। यह स्वीकार्य है कि बच्चे जो भी सीखते हैं, वे जैसे सीखते हैं एवं वे जैसे चिंतन करते हैं, उनकी संस्कृति से संरचित होते हैं। इसे समझने के लिए एक परिस्थिति देखते हैंः

बोध प्रष्न

टिप्पणीः क) अपने उत्तर दिए गए रिक्त स्थान में लिखिए।

ख) अपने उत्तर को इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से मिलाइए।

अपने विद्यालय के श्रेष्ठतम दिन के विषय में सोचिए। इस दिन की घटनाओं को अपनी मानसिकता के अनुसार वर्णित कीजिए, इसके बाद निम्न प्रष्नों का उत्तर दीजिएः

7) क्या आप वह भाषा पहचान सकते हैं, जिसमें आप सोचते हैं? यह कौन सी भाषा है? क्या यह अंग्रेजी है? या यह वह भाषा है जो आप घर पर या अपने दोस्तों के साथ बोलते हैं?

....

....

....

8) मान लीजिए आप अपने मित्र से दुखी है और बहुत नाराज है। आपके विचार नैसर्गिक रूप से कौन–सी भाषा में आते हैं? क्यों?

....

....

....

....

....

....

हममें से अधिकांष अपनी मातृभाषा में सोचते हैं और फिर उसे उस भाषा में अनुवादित करते हैं, जिसमें हम लिखते हैं या दूसरों को वर्णित करते हैं। मातृभाषा वह भाषा है जिसमें हमारे आसपास के लोग बोलते हैं, यह हमारे चिंतन की भाषा भी बन जाती है। ऐसे बहुत शब्द हैं जिन्हें हम उन्हें नहीं समझा पाते जो भाषा नहीं जानते (जबकि हम अनुवाद करते हैं)। यद्यपि, वह उन लोगों द्वारा तत्काल समझ लिए जाते हैं। जो हमारी संस्कृति में रहते हैं। भाषा संस्कृति का केन्द्रीय पक्ष है (हम भाषा के विषय पर अगले भाग में चर्चा करेंगे)। जब हमारी चिंतन की भाषा, हमारे सामाजिक–सांस्कृतिक परिवेष से इस हद तक प्रभावित होती है, तब संस्कृति के अन्य पक्ष भी हमारे विचारों व विकास पर प्रभाव रखते होंगे। इसे हम निम्न प्रकार से प्रकाषित करने का प्रयास करते हैं:

बोध प्रष्न

टिप्पणी: क) अपने उत्तर दिए गए रिक्त स्थान में लिखिए।

ख) अपने उत्तर को इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से मिलाइए।

9) पिछले भाग के प्रारंभ में, हमने सोनू का एक उदाहरण दिया, जो कभी विद्यालय नहीं गया पर गणना में बहुत अच्छा है। वह गणना में क्यों अच्छा है? उसने यह योग्यता कैसे विकसित की? क्या आप इन प्रष्नों के उत्तर सोच सोचते हैं?

....

....

....

....

....

....

....

जो क्रियाएँ हम दैनिक जीवन में करते हैं, हमारे चिंतन एवं ज्ञान पर महत्वपूर्ण प्रभाव रखती हैं। हम कैसे विचारों को विकसित करते हैं और कैसे ज्ञान का निर्माण करते हैं, इस पर भी इनका प्रभाव होता है। यह वह व्याख्या है जिसका सामाजिक–सांस्कृतिक, परिप्रेक्ष्य में दावा किया गया है।

इस परिप्रेक्ष्य की सबसे विशिष्ट व्याख्या लेव.एम. व्योगोत्सकी के कार्यों में मिलती है। व्योगोत्सकी एक रुसी मनोवैज्ञानिक थे। यहाँ यह तथ्य भी रोचक है कि वे एक अध्यापक थे। उनका सिद्धांत या व्याख्याएँ मुख्यतः तब आई जब वे अपने षिक्षण में सुधार के लिए अधिगम एवं विकास का अध्ययन कर रहे थे (वुलफ्लॉक, 2004, पृ. 79)। उनके कार्य बताते हैं कि व्यक्ति एक संस्कृति में जीते हैं और अवस्थित होते हैं। वे उसी संस्कृति में बचपन से प्रौढ़ होने तक विकसित होते हैं। वे अपने सामाजिक सांस्कृतिक वातावरण में ही सारे कार्य करते हैं व सोचते हैं। अतः उनकी विकासात्मक प्रक्रियाएँ केवल उनकी अपनी संस्कृति से अंतःक्रियाओं के अध्ययन से ही समझी जा सकती है। यह परिप्रेक्ष्य यह भी तर्क रखता है कि बच्चों का अधिगम उनके विकास का केन्द्रीय तत्व है। वह कहते हैं कि अधिगम एवं विकास परस्पर सहसंबंधित प्रक्रियाएँ हैं, यद्यपि अधिगम अपने साथ विकास को लाता है।

अब उन अधिगम व विकासात्मक प्रक्रियाओं को समझते हैं जो एक बच्चे की अपने बड़ों व साथियों से अंतःक्रिया के दौरान होती है। उदाहरण के लिए, निम्न स्थिति लेते हैं:

उदाहरण

एक छः वर्ष की बालिका, रितु अगले दिन के लिए अपना बस्ता लगा रही है। वह बस्ते को बंद करने के लिए संघर्षरत है क्योंकि उसने अपने बस्ते में इतना सामान रख लिया है कि वह उसे बंद करने में असमर्थ है। वह अपनी बड़ी बहन कविता से मदद चाहती है।

रितुः दीदी, मेरा बस्ता बहुत छोटा है, मैं इसे बंद नहीं कर सकती।

कविताः ऐसा क्यों?

रितुः मुझे नहीं पता।

कविताः क्या कल तुम इसे बंद कर पाई थीं?

रितुः हाँ, पर आज नहीं।

कविताः क्या तुमने देखा कि तुमने क्या रखा है?

रितुः नहीं।

कविताः फिर देखो; क्या तुम्हें कल रंगों का डिब्बा ले जाना है?

रितुः नहीं, मैं इसे निकाल लूँगी।

कविताः क्या तुमने खाने का डिब्बा बाहर निकाला?

रितुः नहीं, मैं भूल गई। मैं इसे भी निकाल लूँगी।

कविताः क्या तुमने बस्ते में कोई खिलौना रखा है?

रितुः अरे हाँ! मैं इसे आपसे छुपाने का प्रयास कर रही थी। मैं इसे भी निकाल लूँगी।

कविताः अब देखो, क्या तुम बस्ता बंद कर पा रही हो?

रितुः ओह! मैंने बहुत सी चीजें इसमें रख दीं।

अंततः रितु अपना बस्ता बंद करने में सक्षम हो जाती है और उसकी समस्या का समाधान हो जाता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणीः क) अपने उत्तर दिए गए रिक्त स्थान में लिखिए।

ख) अपने उत्तर को इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से मिलाइए।

इस परिस्थिति के आधार पर निम्न प्रश्नों के उत्तर देने का प्रयास करें:

9) समस्या का समाधान कैसे हुआ?

....

....

....

....

....

10) समस्या का समाधान आपके विचार से किसने किया? आप ऐसा क्यों सोचते हैं?

....

....

....

....

....

11) यदि पुनः यही समस्या आए, आपके विचार से क्या रितु उसे समझने व स्वयं हल करने के लिए बेहतर स्थिति में होगी? क्यों?

....

....

....

....

....

वास्तव में न तो रितु ने और न ही कविता ने अकेले समस्या सुलझाई। उन दोनों ने साथ–साथ समाधान किया। हम कह सकते हैं कि दोनों ने साथ–साथ समस्या के समाधान की संरचना की। इसे समाधान अथवा समझ अथवा ज्ञान की सह–संरचना (co-construction) कहते हैं। यह छोटी बहन तथा बड़ी व सक्षम बहन की अंतःक्रिया में संभव हुआ। अब यदि रितु ऐसी ही किसी अन्य समस्या का सामना करती है, तो वह बेहतर ढंग से इसे समझ सकेगी। वह कविता द्वारा उससे पूछे गए प्रष्नों को दोहराएगी एवं आगे बढ़ेगी। ऐसा इसलिए है क्योंकि ऐसे अवसरों पर वह समस्या समाधान की प्रक्रिया के अधिगम का अंतःकरण (internalize) करने में सक्षम होगी। वह अधिगम उसके संज्ञानात्मक विकास के लिए एक आधार तैयार करेगा। धीरे–धीरे रितु अपने छोटे मित्रों को ऐसी ही समस्या के समाधान हेतु निर्देषन देने में सक्षम होगी।

इस प्रक्रिया की व्याख्या करते समय व्योगोत्सकी लिखते हैं "बच्चे के सांस्कृतिक विकास में प्रत्येक क्रिया दो बार होती हैः एक, सामाजिक स्तर पर और फिर बच्चे के अंदर" (व्योगोत्सकी,, 1978)। उच्चस्तरीय मानसिक प्रक्रियाएँ पहले व्यक्तियों के साथ अंतःक्रिया में जन्म लेती हैं एवं फिर बालक द्वारा इन्हें आत्मसात किया जाता है। हम यह भी कह सकते हैं कि ज्ञान प्रौढ़ों व बच्चों द्वारा एक साथ अंतःक्रियाओं में निर्मित होता है और फिर बच्चे इसे आत्मसात करते हैं (वुलफ्लॉक, 2004, पृ. 368)।

यदि आप ध्यानपूर्वक विश्लेषण करें तो उपरोक्त उदाहरण में आप पाएँगे कि रितु ने पहले स्वयं समस्या समाधान का प्रयास किया। वह बस्ते के ढक्कन को खींच रही थी। अतः सोच रही थी कि समस्या कैसे सुलझाई जाए। जब वह उस बिन्दु पर पहुँची जहाँ वह अपनी मदद नहीं कर सकती थी (और आगे बढ़ने में कठिनाई अनुभव हुई), उसने मदद माँगी। व्योगोत्सकी इसे **समीपस्थ विकास का क्षेत्र (Zone of Proximal Development - ZPD)** कहते हैं। समीपस्थ विकास के क्षेत्र की पहचान तब होती है जब बच्चा समस्या को सुलझाने के समीप पहुँच जाता है परतु उसे बिना मदद के स्वयं सुलझा नहीं पाता। यह बच्चे की समस्या समाधान की वर्तमान क्षमता एवं समस्या समाधान की अन्तर्निहित क्षमता के बीच अंतर दर्षाता है। वह समझा जा सकता है कि जब बच्चे किसी समस्या पर कार्य करता है, उसके वास्तविक विकासात्मक स्तर व संभावित विकासात्मक स्तर के बीच के अंतर का पता लगता है। योग्य साथियों या बड़ों की मदद से बच्चा यह सीख लेता है कि इस अंतर को कैसे कम किया जाए।

इस प्रत्यय की समझ के आधार पर यह कहा जा सकता है कि अध्यापक, बच्चों के सामाजिक सांस्कृतिक परिवेष को समझकर ज्यादा अर्थपूर्ण रूप से कार्य कर सकता है। अध्यापक निरंतर बच्चे की प्रगति को विभिन्न क्रियाओं व एवं समस्याओं द्वारा विश्लेषित कर सकता है। उसे अपने उन साथियों के साथ काम करने के अवसर मिलने चाहिए, जिन्होंने समस्या समाधान किया है या क्रिया की अग्रिम अवस्था में हैं। इससे बच्चे को आगे बढ़ने में तात्कालिक अंतःक्रिया प्राप्त होगी। अध्यापक को यह भी मूल्यांकित करना होगा कि बच्चे कार्य में एक–दूसरे को कैसे मदद करते हैं एवं सामूहिक कार्य करते हैं। षिक्षण–अधिगम में बच्चे के सामाजिक–सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य को बेहतर समझने के लिए माता–पिता व समुदाय को अवष्य सम्मिलित करना होगा तथा समुदाय से पूर्णरूपेण मदद प्राप्त करनी होगी।

8.5.3 भाषा एवं संज्ञान

क्या आप भाषा के बिना एक समस्या का समाधान कर सकते हैं? जब आप इसके बारे में सोचते हैं तो इसे नाम देते हैं? क्या इसके लिए भाषा की आवष्यकता होती हैं?

भाषा एक ऐसा क्षेत्र है जहाँ पियाजे एवं व्योगोत्सकी, दोनों ने विस्तार से काम किया एवं लिखा। वास्तव में, व्योगोत्सकी के सामाजिक–सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य के अनुसार बच्चे के विकास एवं अधिगम में उनकी बड़ों व योग्य साथियों के साथ अंतःक्रिया का क्रांतिक महत्व है। अतः, विकास अंतःक्रिया में भाषा की भी केन्द्रीय भूमिका होती है। व्योगोत्सकी (1978) लिखते हैं कि भाषा बच्चों को निम्न के योग्य बनाती हैः

- कठिन कार्यों के समाधान में (जब बच्चा समस्या को स्पष्ट करता है, यह भाषा में होता है)
- आवेगषील क्रियाओं पर नियंत्रण में (बच्चे स्वयं को भाषा के माध्यम से नियंत्रित करते हैं, यदि वे एक बिजली के स्विच को छूने वाले होते हैं, वे स्वयं से "नहीं" कहते हैं)

- क्रियान्वयन से पूर्व एक समस्या के समाधान की योजना बनाने में,
- अपने व्यवहार पर नियंत्रण करने में।

व्योगोत्सकी का विष्वास है कि चूँकि संस्कृतियों एवं समुदायों में भाषा में विभिन्नता होती है, अतः चिंतन/संज्ञान में भी भिन्नता होती है। अतः भाषा केवल दूसरों के साथ अंतःक्रिया में ही आवष्यक नहीं है, यह सामाजिक–सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में मानसिक प्रक्रियाओं के विकास का भी एक महत्वपूर्ण पक्ष है। अध्यापक के लिए यह समझना महत्वपूर्ण हो जाता है कि एक कक्षा में विभिन्न भाषाई पष्ठभूमि के बच्चे कैसे धीरे–धीरे दूसरी भाषा की ओर संक्रमण करते हैं।

बच्चों की आत्मवार्ता एवं विकास

क्या आपने बच्चों को स्वयं से बात करते देखा है? पियाजे एवं व्योगोत्सकी दोनों ने बच्चों की आत्म वार्ता पर लिखा है। वास्तव में, यह पियाजे एवं व्योगोत्सकी द्वारा प्रतिपादित आत्मवार्ता को देखने की विधियों के बीच बहस का विषय है। पियाजे इसे आत्मकथन (Private speech) कहते हैं, और इसे प्राक–परिचालक अवस्था का लक्षण मानते हैं। आत्मकेन्द्रीयता का प्रत्यय प्रत्यास्मरण कीजिए। पियाजे ने आत्मकथन को आत्मकेन्द्रित से संबद्ध किया और इसे आत्मकेन्द्रित कथन (ecocentric speech) कहा। वे कहते हैं कि ऐसे कथन इषारा करते हैं कि बच्चे दूसरों के दृष्टिकोण को देखने में सक्षम नहीं हैं। वे केवल वही बात करते हैं, जो वे चाहते हैं, परंतु जैसे जैसे बच्चा संज्ञानात्मक एवं सामाजिक रूप से विकसित होता है, ऐसे कथन धीरे–धीरे विलुप्त हो जाते हैं। बच्चा धीरे–धीरे दूसरों की रुचियों का सम्मान कर बोलने एवं उनके साथ अंतःक्रिया की योग्यता विकसित करने में सक्षम हो जाता है। दूसरी ओर, व्योगोत्सकी का मानना है कि ऐसी आत्मवार्ता एक धनात्मक विकासात्मक भूमिका निभाती है। बच्चे के संज्ञानात्मक विकास में यह महत्वपूर्ण है एवं धीरे–धीरे उसे स्वयं को नियंत्रित करने, स्वयं का प्रबोधन करने, समस्याओं के समाधान की योजना बनाने और उसे क्रियान्वित करने के योग्य बनाता है।

भाषा का विषय इतना जटिल है कि इसे पूर्णतया समझ पाना कठिन है। भाषा में सामाजिक व संज्ञानात्मक दोनों पक्ष आते हैं। विषय की गहराई जाने बिना, यहाँ हम कह सकते हैं कि अध्यापक को, बच्चों को अपनी भाषा में बोलने व स्वतंत्र अभिव्यक्ति के अवसर बहुतायत में देने चाहिए। अध्यापक को विशेषतः प्राथमिक कक्षा के बच्चों को पढ़ाते समय बहुत से भाषाई खेल खिलाने व चिन्तन करने पर बल देना चाहिए, क्योंकि बच्चे अपनी भाषा का तंत्र विकसित कर रहे हैं। मातृभाषा (या सामाजिक परिवेष की भाषा) बच्चे को सबसे नैसर्गिक भाषा होती है और बच्चे का अधिकांष चिंतन इसी भाषा में होता है। अतः, मातृ भाषा में बात करना और विभिन्न रूपों में मातृ भाषा का प्रयोग बच्चों के संज्ञानात्मक विकास में मदद करता है।

यद्यपि, विद्यालय, अध्यापक एवं माता–पिता बच्चों को दूसरी भाषा में प्रवीणता का दबाव बनाते हैं व इच्छा रखते हैं, जबकि वे अपनी भाषा के प्रयोग में सक्षम हो रहे होते हैं। यह बच्चों के चिंतन को विभिन्न प्रकार से वाछित करता है।

परंपरागत विद्यालय विभिन्न तरीकों से बच्चे के विकास में अवरोध उत्पन्न करता है इसलिए विगत एक दषक में विद्यालय षिक्षण की समझ में बदलाव हुआ है।

8.5.4 सैद्धांतिक परिदृश्य एवं षिक्षा के बोध में तात्कालिक बदलाव

संज्ञानात्मक विकास एवं अधिगम के दो परिदृश्य (पियाजे एवं व्योगोत्सकी) बच्चे, अध्यापक, षिक्षण–अधिगम, पाठ्यक्रम कक्षा व विद्यालय को समझने में अर्वाचीन बदलावों का आधार तैयार करते हैं। इन परिदृश्यों के आधार पर राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा, 2005, तथा षिक्षा के अधिकार ने बच्चे को अध्यापक द्वारा पढ़ाए जा रहे पाठ का निष्क्रिय अभिग्राहक न मानकर ज्ञान का एक सक्रिय संरचनाकार (Active Constructor) कल्पित किया है। बच्चों के अनुभव ही उनमें विकास लाते हैं। अतः, बच्चों के अनुभव उनकी शैक्षिक गतिविधियों का केन्द्र है। बच्चों के विविध अनुभव, पहचान, संस्कृतियाँ, भाषाएँ, रुचियाँ, विकास एवं प्रफुल्लताएँ षिक्षण–अधिगम में आधार के रूप में देखे गए हैं अर्थात् बच्चों की विविध गतियाँ, रीतियाँ एवं परिवेष कक्षा के संसाधन माने जाने चाहिए न कि इन्हें समस्या के रूप में लेना चाहिए। अतः वे गतिविधियाँ कक्षा का हृदय हैं जो अध्यापक को साथ लाती हैं, उन्हें अंतःक्रिया के अवसर देती हैं एवं साथ–साथ समस्याओं पर कार्य करने के अवसर देती हैं। आवष्यकता है ऐसे षिक्षा तंत्र के विकास की जो प्रत्येक बच्चे का आदर कर सके व उसके सर्वांगीण विकास का प्रावधान कर सके। ये बच्चों की एकरूपता के कार्यक्रम में बदलाव की माँग करता है। बच्चे को जो विद्यालय की सभी प्रक्रियाओं का केन्द्र माना गया है। यदि आप षिक्षा के अधिकार अधिनियम के निम्नलिखित प्रावधान का ध्यानपूर्वक विश्लेषण करें तो आप देखेंगे कि यह इन परिप्रेक्ष्यों से किस प्रकार संबंधित हैं। निम्नलिखित को पढ़ेंः

षिक्षा का अधिकार (भारत सरकार, 2009) खंड 29 (2)ः

पाठ्यक्रम, षिक्षण प्रक्रियाएँ एवं आंकलन सुनिष्चित करेंगेः

- संविधान में प्रतिष्ठित मूल्यों से समारूपता
- बच्चे का सर्वांगीण विकास
- बच्चे के ज्ञान, क्षमता एवं योग्यता का निर्माण
- शारीरिक एवं मानसिक योग्यताओं का पूर्णरूपेण विकास
- बाल केन्द्रित एवं बालानुकूल रूप से क्रियाओं, खोज एवं अंवेषण द्वारा अधिगम
- अनुदेषन का माध्यम (जहाँ तक संभव हो) बालक की मातृभाषा
- बच्चे को भय, आघात एवं चिंता से मुक्त करना एवं बच्चों को स्वतंत्र अभिव्यक्ति में मदद करना
- बच्चे के ज्ञान की समझ का व्यापक एवं सतत मूल्यांकन (CCE) और प्रयोग करने की उसकी क्षमता

(भारत सरकार 2009, पृष्ठ 9)

8.5.4.1 अध्यापक के कार्यों से यह कैसे संबंधित है?

हो सकता है कि षिक्षा का अधिकार अधिनियम में अध्यापक को बच्चों के अधिगम में सहायक के रूप में दृष्टिगत किया गया है। अध्यापक की मुख्य भूमिका बच्चों को ज्ञान के निर्माण में सक्षम बनाने की है। इसमें अध्यापकों को विषयवस्तुगत ज्ञान का प्रचारक नहीं माना गया है। वे षिक्षा से संबंधित सभी प्रक्रियाओं में सक्रिय, प्रासंगिक एवं रचनात्मक माने गए हैं जिसमें पाठ्यक्रम व पाठ्यपुस्तक का विकास एवं आकलन समाहित है। अतः अध्यापकों को आदर्षतः लगना चाहिएः

- बच्चों के प्रेक्षण एवं उन्हें व्यस्त रखने में

- बच्चों से संबंध बनाने व बातचीत करने में
- बच्चों के सामाजिक–सांस्कृतिक परिवेष, उनकी गति, सीखने की रीतियाँ व रुचियाँ समझने में
- षिक्षण–अधिगम वातावरण के संगठन में जो प्रफ्फुलित एवं संपन्न बनाता हो
- बच्चों में आत्मविश्लेषण, आत्म–मूल्यांकन, अनुकूलता, लचीलापन, क्रियात्मकता एवं नवाचारों की क्षमता विकसित करने में
- बच्चों के सामाजिक परिवेष से जुड़ी विषयवस्तु, विषयगत ज्ञान का परीक्षण एवं सामाजिक वास्तविकताओं से जुड़ी विषयवस्तु से संलग्न करने में
- तात्कालिक समुदाय से अंतःक्रिया करने में।

(एन सी एफ टी ई 2009, पृ. 23–24)

8.6 सारांष

इस इकाई में हमने संज्ञानात्मक विकास के प्रत्यय के विकास में जाना। पियाजे का सिद्धांत तथा व्योगोत्सकी का सिद्धांत, वे दो सिद्धांत हैं जो संज्ञान, अधिगम तथा बच्चों के विकास पर गहराई से विचार करते हैं।

पियाजे के सिद्धांत के अनुसार, संज्ञानात्मक विकास का केन्द्र आत्मसातीकरण, अनुकूलन व साम्यधारण है। व्योगोत्सकी के अनुसार संज्ञानात्मक विकास सामाजिक तथा सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्यों के द्वारा होता है। इन दो सिद्धांतों के आधार पर राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा 2005 तथा षिक्षा का अधिकार कानून ने बच्चे को ज्ञान का सक्रिय निर्माणकर्ता दृष्टिगत किया है। इकाई के अंत में अध्यापक की भूमिका में कक्षा में एक सक्रिय सदस्य से एक सहायक के बदलाव पर बात करती है।

8.8 इकाई के अंत में अभ्यास

1) बच्चों में प्राक–परिचालक अवस्था एवं प्रत्यक्ष परिचालक अवस्था में चिंतन कैसे एक–दूसरे से अलग हैं? व्याख्या कीजिए।

2) चिंतन में बातचीत का उदाहरण दीजिए, जैसा कि आपने पियाजे के सिद्धांत में पढ़ा है?

3) मान लीजिए आपने पढ़ाए जाने वाले किसी एक विषय क्षेत्र से संबंधित गतिविधि आयोजित की है। आपने सामूहिक कार्य दिया है। बच्चों का एक समूह, दूसरे समूहों से पहले कार्य कर लेता है। आप इस प्रक्रिया को कैसे जानेंगे और क्यों?

4) रितु एवं कविता की बस्ता बंद करने की समस्या का उदाहरण लीजिए। उदाहरण से संकेत लेते हुए, एक संवाद वर्णित कीजिए कि आप एक बच्चे की दैनिक जीवन संबंध ी किसी समस्या के समाधान में कैसे सम्मिलित होंगे? इसमें सम्मिलित समीपस्थ विकास का क्षेत्र (Zone of Proximal Development – ZPD) की पहचान कीजिए व इसकी व्याख्या कीजिए।

8.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

2) क) अध्यापक बच्चों के तर्कपूर्ण चिंतन को जान सकता है।
   ख) वैयक्तिक अंतर पहचाने जा सकते हैं।
   ग) अध्येता की सामाजिक परिस्थितियों की पहचान की जा सकती है।

3) क) वातावरण की प्राकृतिक परिस्थितियाँ
   ख) बड़ा बच्चा, फरीदा छोटे अब्दुल की तुलना में तर्क का प्रयोग करने में सक्षम हैं।
   ग) अब्दुल के गलत उत्तर, सही उत्तरों की तुलना में बच्चों के तर्क–विश्लेषण व चिन्तन को जानने में बेहतर मदद कर सकते हैं।

5) एक नया प्रत्यय पढ़ाते समय, अध्यापक, छात्र के पूर्व ज्ञान को प्रयोग कर सकता है। अध्यापक सेब और सन्तरे में अंतर स्पष्ट करते समय, उनमें समानताएँ पूछ सकता है। बच्चे पहले दोनों का फल बताएँगे। फिर वे उसके आकार व रंग में अंतर स्पष्ट करेंगे। बच्चे को सही ज्ञान उसे चखकर और आंतरिक संरचना देखकर ही प्राप्त होगा।

8) बड़े होने के परिवेषों में अंतर, दैनिक अनुभव, मानसिक योग्यता का विकास।

9) बस्ते से कोई वस्तु निकालकर

10) दोनों ने समस्या का समाधान किया। दोनों ने समाधान साथ–साथ खोजा।

11) हाँ, रितु ने समस्या समाधान की प्रक्रिया का आत्मीकरण किया। इस अधिगम ने उसके संज्ञानात्मक विकास हेतु एक आधार तैयार किया।

8.9 संदर्भ पुस्तकें

वर्क, लउरा ई, (2008), *चाइल्ड डेवलेपमेंट* (8वाँ संस्करण), दिल्लीः पियरसन एजुकेषन।

ईगन, के. (1983), *एजुकेषन एंड साइकोलॉजीः प्लेटो, पियाजे एंड साइंटिफिक साइकोलॉजी*, न्यूयार्कः टीचर कॉलेज प्रेस।

भारत सरकार (2009), *दी राइट ऑफ चिल्ड्रन टू फ्री एंड कम्पसरी एजुकेषन एक्ट*, विधि एवं न्याय मंत्रालय, संवैधानिक विभाग, नई दिल्ली, भारत।

हरगनहॉन, बी.आर. एवं ओल्सन, एम. (2005), *एन इंट्रोडक्षन टू लर्निंग थ्योरी*, नई दिल्ली, प्रेन्टिस हॉल।

इनहेल्डर, बी. एवं पियाजे., जे. (1958), *दी ग्रोथ ऑफ लॉजिकल थिंकिंग फ्रॉम चाइल्डहुड टू एडोलेससेंस*, न्यू यार्कः बेसिक बुक्स।

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रषिक्षण परिषद (2005), *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा*, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रषिक्षण परिषद, दिल्ली, भारत।

राष्ट्रीय षिक्षक षिक्षा परिषद (2009), *षिक्षक षिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा*, राष्ट्रीय षिक्षक षिक्षा परिषद, दिल्ली, भारत।

पियाजे. जे., (1970 / 1929), *चाइल्ड्स कॉनसेप्सन ऑफ द वर्ल्ड*, राउटलेस।

संट्रोक, जॉन, डब्ल्यू, (2007) *चाइल्ड डेवलेपमेंट* (11वाँ संस्करण), न्यूयार्कः टाटा मैग्राहिल।

व्योगोत्सकी, एल. एस. (1978), *माइन्ड इन सोसाइटी*, कैम्ब्रिजः हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

वुलफ्लॉक, अनीता (2009), *एजुकेषनल साइकोलॉजी*, दिल्ली, पियरसन प्रिन्टिस हॉल।